Vol.11 September17 No.2
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण

BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation

ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

भारत माता

-श्री बाबूलाल शर्मा प्रेम

वन उपवन अनुराग मंजरित, मधुमय छटा ललाम है;
शस्य श्यामला भारत जननी, तुझको कोटि प्रणाम हैं।
तेरा कण-कण पुण्यतीर्थ है, मधुर सुधोपम नीर है;
स्वर्ग सुखों को देने वाला, त्रिविध सुगन्ध समीर है।
तू गौरवशालिनी विश्व में, तेरी कीर्ति महान है;
तू ही चिर साधना, तपस्वी जीवन का वरदान है।
वसुंधरा धरती भू मधुरा, तेरे अनगिनत नाम हैं;
शस्य श्यामला भारत जननी, तुझको कोटि प्रणाम है।
आलोकित हैं सभी दिशाएँ, तेरे सुयश प्रकाश से;
उपवन की हर डाल सुशोभित है, तेरे मधुमास से।
नहीं मृत्तिका, तू चंदन है; तुझे चढ़ाऊँ भाल पर;
तेरा शुभ आशीष मिले, हम जय पायेंगे काल पर।
नव प्रेरक आलोक पुंज-सी तेरी छवि निष्काम है;
शस्य श्यामला भारत जननी, तुझको कोटि प्रणाम है।
वेद मंत्र-सी पावन तेरी गीतों की हर एक कड़ी;
लता-द्रुमों की छाँव सुहानी, शान्ति रसायन लिये खड़ी।
धन समृद्धि से पूर्ण प्रफुल्लित, सेवामय हर गाँव है;
क्रांति शांति को हरने वाली, हर तरुवर की छाँव है।
तू आराध्य, जुटे तेरी, पूजा में व्रती किसान है;
कंठ कंठ से मुखरित तेरे स्वतंत्रता के गान हैं।
प्राणमयी माँ, तू सुहासिनी, चिर सुखदा अभिराम है;
शस्य श्यामला भारत जननी, तुझको कोटि प्रणाम है।

विनम्र अनुरोध

इस मास ब्रह्मार्पण को आरंभ हुए दस वर्ष हो गए हैं। आपके सहयोग और प्रेरणादायक सुझावों से हम इसमें निरंतर सुधार कर रहे हैं, इसके लिए हम आभारी हैं। आशा है आप हमें प्राचीन भारतीय संस्कृति के गौरवपूर्ण आदर्शों तथा ऋषि मुनियों द्वारा प्रणीत वैदिक साहित्य, उपनिषदों, दर्शनों, गीता आदि में-प्रतिपादित नैतिक जीवन मूल्यों के प्रचार में अपना योगदान देते रहेंगे।

हमारे इस प्रयास को गतिशील बनाए रखने के लिए कृपया आप अपना अंशदान नियमित रूप से भिजवाते रहें। यदि आपने अपना अंशदान न दिया हो तो शीघ्र ही अपना योगदान श्री ब्रह्मदत्त उक्खल, सी-2ए15/58 जनकपुरी नई दिल्ली 110058 के पते पर प्रेषित करें। मो. नं.-9313749812

संपादक

Brahmarpan September'17 Vol. 11 No.2
भाद्रपद-आश्विन 2074 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

CONTENTS

1. भारत माता 2
–श्री बाबूलाल शर्मा प्रेम
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
–डॉ. भारत भूषण
4. भारत कब स्वाधीन होगा। 8
–भारत भूषण विद्यालंकार
5. भारत के सर्वश्रेष्ठ महानायक–कृष्ण 12
–श्रीमती सन्तोष परमार
6. धन की पवित्रता 16
–महात्मा चैतन्यमुनि
7. दयानन्द के उद्घोष के राजनीतिक मंच पर उद्गाता तिलक 21
8. क्रांति का केन्द्र थी बासौद की मस्जिद 24
–अमित राय जैन
9. भारत, दैट इज इंडिया 27
10. तुलसी मीठे वचन ते सुख उपजे चहुं ओर 29
–श्री भद्रसेन
11. भारत स्वातन्त्र्य और ऋषिदयानन्द–2
–सत्यप्रिय शास्त्री 32
12. Mind Blowing Facts About Sanskrit 34

संपादकीय

श्रावणी उपाकर्म और रक्षाबंधन

इस वर्ष अगस्त मास में संयोग से अनेक पर्व मनाने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। हमारे पारंपरिक सांस्कृतिक पर्व श्रावणी जिसे उपाकर्म भी कहते हैं 7 अगस्त को मनाया गया है। श्रवण नक्षत्र से संबंद्ध होने के कारण श्रावण पूर्णिमा को श्रावणी कहते हैं। हिन्दू धर्म और संस्कृति के इस पर्व में स्वाध्याय का विशेष महत्त्व है। चारों आश्रमों और तीनों द्विज/वर्णों में स्वाध्याय का सर्वोच्च स्थान है। इसलिए कहा है "स्वाध्यान्माप्रमदः" अर्थात् स्वाध्याय से प्रमाद नहीं करना चाहिए। प्राचीन काल में हमारे देश में वेदों, उपनिषदों तथा अन्य वैदिक साहित्य का ही पठन-पाठन होता था। यहाँ तक कि संन्यासी को भी जिसे अन्य सब कार्यों को न करने की छूट थी परन्तु वेदों के स्वाध्याय से छूट नहीं थी। कहा भी है- संन्यसेत् सर्व कर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्" स्वाध्याय को विशेष महत्त्व देने का कारण यही था कि जैसे शरीर का पोषण अन्न से होता है वैसे ही शरीर के राजा मन का उत्कर्ष स्वाध्याय और ज्ञान से होता है। इस पर्व को उपाकर्म इसलिए कहते हैं क्योंकि इस दिन से चातुर्मास्य में वेदों के अध्ययन का क्रम आरंभ होता था। प्राचीन काल में इसी समय गुरुकुलों में नए शिक्षासत्र का शुभारंभ होता था। इस पर्व पर लोग वेदपाठ, यज्ञ-हवन, प्रवचन और दान पुण्य करते थे। श्रावणी पर यज्ञ से पूर्व पुराने यज्ञोपवीत को बदल कर नया यज्ञोपवीत धारण करते हैं। श्रावणी पर्व के साथ ही रक्षाबंधन का त्योहार भी मनाया जाता है। इस अवसर पर बहनें अपने भाइयों की कलाई पर रक्षा-सूत्र बाँधती हैं और भाइयों से स्नेहोपहार की अपेक्षा रखती हैं तथा उनके

सुंदर भविष्य की मंगलकामना करती हैं?

इस वर्ष कृष्णजन्माष्टमी का पर्व भी 15 अगस्त को मनाया जा रहा है।

कृष्ण-जन्माष्टमी-श्री योगेश्वर कृष्ण ऐसे महापुरुष थे जिनका जन्म लोक कल्याण और दुष्टों के विनाश के लिए हुआ था। श्रीकृष्ण का जीवन जन्म से मृत्यु पर्यन्त कठिनाइयों से भरा था। श्रीकृष्ण के उदात्त चरित्र पर टिप्पणी करते हुए महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश में लिखा है कि ... "श्रीकृष्ण का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण ने जन्म से मरणपर्यन्त कोई बुरा काम किया हो, ऐसा नहीं लिखा।" कौरवों और पांडवों के बीच युद्ध में श्री कृष्ण ने धर्म और न्याय का पक्ष लिया तथा 'अधर्म और अन्याय' के विरुद्ध संघर्ष किया। युद्ध में गीता के माध्यम से श्रीकृष्ण ने अर्जुन को क्षत्रिय धर्म का पालन करने और नपुंसकता के त्याग का उपदेश दिया। पुराणों ने श्रीकृष्ण के उज्ज्वल चरित्र को विकृत और कलंकित कर दिया। उसकी उपेक्षा करके हमें श्रीकृष्ण के निर्मल, प्रेरणादायक, स्मरणीय चरित्र का अनुकरण करना चाहिए।

स्वतंत्रता दिवस, एक राष्ट्रीय पर्व- आज से सत्तर वर्ष पूर्व 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ। यह हमारी स्वाधीनता की दूसरी लड़ाई थी। 1857 में जब देश में अंग्रेजी साम्राज्य जड़ें जमा रहा था और वह हमारी शिक्षा और संस्कृति को समाप्त करने का प्रयास कर रहा था तभी हमारे रजवाड़ों और सैनिकों ने अंग्रेजों की चाल को समझ कर उनके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। इसमें देश के कितने ही वीरों और वीरांगनाओं ने अपने प्राणों की आहुति दे दी। इसके बाद अंग्रेजों ने अपनी सुप्रशिक्षित सैन्य शक्ति से देश

पर अपनी पकड़ मज़बूत कर ली। सन् 1947 में पुनः क्रान्तिकारियों और देशभक्तों ने संगठित होकर देश को स्वतंत्र करवाया। इसके लिए एक ओर जहाँ भगतसिंह, ऊधमसिंह, चंद्रशेखर 'आजाद' आदि क्रांतिकारियों तथा नेताजी सुभाषचंद्र बोस ने और दूसरी ओर अहिंसावादी महात्मा गाँधी, बाल गंगाधर तिलक, स्वामी श्रद्धानन्द, लाला लाजपतराय आदि ने देश की स्वाधीनता के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। इसके अतिरिक्त अंग्रेजों की कूटनीति के कारण देश को विभाजन का झटका सहना पड़ा जिसके कारण लाखों देशवासियों को पाकिस्तान से उजड़ने के कारण प्राण देने पड़े और अपना घरबार छोड़कर विस्थापित होना पड़ा। उनकी पीड़ा की हम कल्पना नहीं कर सकते। परन्तु हमारे वीर देशवासी फिर से अपने पैरों पर खड़े हो गए।

स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद देशवासियों के सामने नई शुरुआत करने का सुअवसर था। देश की युवाशक्ति को सच्चरित्रता, नैतिकता और राष्ट्र के प्रति समर्पण का पाठ पढ़ाने और देश की सशक्त नींव डालने का सुनहरा अवसर था। हमने देश के भौतिक विकास के लिए आध्यात्मिक विकास को नजरअंदाज कर दिया। इसी कारण आज हमें देश की चरित्रहीन पीढ़ी का सामना करना पड़ रहा है। आज देश को भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी, अलगाववाद, आतंकवाद, जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रवाद का घुन खाए जा रहा है। इससे देश की आन्तरिक और बाह्य सुरक्षा खतरे में है।

आज सरकारी सेवाओं में योग्य, ईमानदार, कर्त्तव्यनिष्ठ व्यक्तियों की आवश्यकता है जो निस्वार्थ भाव से कार्य करें और देश को सुखी और समृद्ध बनाएँ।

संपादक

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-116)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

सूत्रकार पूर्व सूत्र में कथित अर्थ का उपसंहार निम्नलिखित सूत्र में करते हैं- सूत्र है।

उपाधिर्भिद्यते न तु तद्वान्।।116।।

अर्थ-(उपाधिः) शरीर (भिद्यते) नष्ट हो जाता है (तु) परन्तु (तद्वान्) देही (आत्मा) (न) नहीं।

पहले सूत्र की तरह यहाँ भी 'उपाधि' पद शरीर के लिए प्रयुक्त हुआ है। उत्पाद विनाशशाली होने के कारण देह का नाश हो जाता है, परन्तु देही का नाश नहीं होता; क्योंकि वह नित्य और अपरिणामी है। जन्म-जन्मान्तरों में अनेक देहों को धारण करता हुआ शुभाशुभ कर्मफलों की तथा बन्ध-मोक्ष की व्यवस्था का उपपादन किया जा सकता है। इस प्रकार अनेक शरीरों के बदलते रहने पर भी आत्मा उनमें एक ही बना रहता है। 115 और 116 सूत्रों को पूर्वपक्ष रूप में लगाया जा सकता है। जो इस प्रकार है-

(उपाधि भेदे) अन्तःकरण आदि उपाधि का भेद होने पर (एकस्य अपि) एक आत्मा का भी (नानायोगः) अनेक देहादि के साथ संबंध है। (आकाशस्येव) जैसे आकाश का (घटादिभिः) घट आदि के साथ।

आत्मा केवल एक है, अन्तःकरण अनन्त हैं, उन्हीं के द्वारा अनेक देहादि के साथ एक आत्मा का संबंध संभव है। उसी के आधार पर जन्म-मरण आदि की व्यवस्था मानी जा सकती है; जैसे एक आकाश का संबंध घट, मठ आदि अनेक पदार्थों के साथ देखा जाता है। ऐसी अवस्था में अनेक आत्माओं का माना जाना व्यर्थ है।

दी हिबिस्कस,
बिल्डिंग-5, एपार्ट नं.-9बी
सेक्टर-50, गुड़गाँव (हरियाणा) 122009
फोन-0124-4948597

भारत कब स्वाधीन होगा?

-भारत-भूषण विद्यालंकार

सन् 1947 में देश का विभाजन हुआ। आधी रात को नए राष्ट्र के नव नियुक्त प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु ने शपथ लेने के बाद घोषणा की कि आज देश आजाद हो गया है। हम अब अपने देश के भाग्य-विधाता हैं। उधर देश के दोनों भागों में हिंसा का तांडव हो रहा था। खून की नदियाँ बह रही थीं। कल तक जो हिन्दू और मुसलमान भाई-भाई की तरह रह रहे थे। वे एक-दूसरे के दुश्मन बन गए। यह सब अंग्रेजों की उस कूटनीति का हिस्सा था जिसमें बाँटो और शासन करो की नीति का सहारा लिया जाता है।

इन घटनाओं से भी हमने कुछ नहीं सीखा। हमने अंग्रेजों के उस प्रतिनिधि को अपना गवर्नर जनरल बना लिया जिसने उस खूनी विभाजन की रूप रेखा तैयार की थी। हो सकता है इसमें नेहरू की कुछ विवशता रही हो जिसके कारण देश का राष्ट्राध्यक्ष ऐसे व्यक्ति को बना दिया गया जिसे हमारी परंपराओं, हमारी संस्कृति और हमारे रीतिरिवाजों का कुछ भी ज्ञान नहीं था। स्वाधीन होने के बाद भी ब्रिटिश शासन काल की प्रबंध-व्यवस्था को बनाए रखा गया। जिस समय भारत यानी इंडिया आजाद हुआ उसी समय पाकिस्तान तथा अन्य अनेक देश स्वाधीन हुए थे। उन देशों के नेताओं ने अपने देश की भाषा, संस्कृति और परंपराओं को पुनर्जीवित करने का प्रयास किया। हमने मैकॉले द्वारा स्थापित उस शिक्षा व्यवस्था को भी जारी रखा जिसका उद्देश्य देश में ऐसे बाबू (क्लर्क) पैदा करना था जो अपने अतीत को भूलकर ब्रिटिश शासन को चलाने में उनके विश्वासपात्र हों। हमारी

शिक्षा व्यवस्था आज भी उसी ढर्रे पर चल रही है। आज भी देश अपनी भाषा के बिना गूँगे के समान है। देश की 95 प्रतिशत जनता उस भाषा को ढोने को विवश है जिसे अंग्रेजों ने अपनी सुविधा के लिए हम पर थोप दिया था। जिसका मूल उद्देश्य प्रच्छन्न रूप से ईसाइयत का प्रचार-प्रसार करना था। हमारे शिक्षित वर्ग ने भी सहज ही उसे स्वीकार कर लिया क्योंकि वे हीं उनके उत्तराधिकारी थे, फलस्वरूप बहुत बड़ी संख्या में लोगों ने ईसाइयत को अपना लिया। स्वाधीनता से पूर्व बड़े ही सुनियोजित ढंग से अंग्रेजों ने आदिवासियों और निरक्षर अनुसूचित वर्गों और जन-जातियों के लोगों को कुछ सुविधाएँ और पैसे का लालच देकर ईसाई बनाया। पिछड़े क्षेत्रों में आज भी उनका विस्तृत जाल बिछा हुआ है। उनकी इस कूटनीतिक चाल का पता संस्कृत के पाश्चात्य विद्वान् मैक्मूलर के पत्र से चलता है जिसमें उसने अपनी पत्नी को लिखा कि मैंने वेदों का ऐसा भाष्य कर दिया है जिसे पढ़कर भारत के लोग अपने वेदादिशास्त्रों और धर्म से घृणा करने लग जाएँगे और सहज ईसाई बनना पसंद करेंगे। अब यदि सरकार मेरे इस प्रयास का लाभ न उठाए तो इसमें मेरा कोई दोष नहीं होगा। क्योंकि जिस उद्देश्य से अंग्रेजों ने मुझे संस्कृत भाषा और वैदिक साहित्य पढ़ने के लिए ऑक्सफोर्ड में बोडेन स्कालरशिप दी थी उसे मैंने पूरा कर दिया। आज भी देश में अंग्रेजी माध्यम से चलने वाले जितने भी मिशनरी स्कूल हैं वे परोक्षरूप में भारतीयता की सोच को बदल कर (ब्रेनवाशिंग करके) उन्हें ईसाई बना रहे हैं। वहाँ बच्चों को अपनी मातृभाषा में बातचीत करने की भी पाबन्दी है और जो अपनी मातृभाषा का व्यवहार करते हैं उन्हें अपमानित किया

जाता है। यह कितनी शर्म की बात है। अन्यथा देश की जनता को 5 प्रतिशत लोगों की भाषा के माध्यम से शिक्षा देने का क्या औचित्य है? कुछ दिग्भ्रमित लोग अंग्रेजी की शिक्षा को वैश्वीकरण (ग्लोबलाइजेशन) के संदर्भ में कंप्यूटरीकरण के लिए अनिवार्य मानते हैं। वे तो यह भी कहने लगे हैं कि भारतीय भाषाओं, विशेषतः हिन्दी के स्थान पर अंग्रेजी का प्रयोग अनिवार्य कर दिया जाए। इतना ही नहीं देवनागरी और अन्यलिपियों के स्थान पर रोमनलिपि को अपना लिया जाए। इन बातों पर ध्यान दें तो ऐसा प्रतीत होगा कि हमें गुलामी की आदत पड़ गई है। विश्व के कितने ही देश जैसे रूस, चीन, फ्रांस, जापान, कोरिया, जर्मनी एवं यहाँ तक कि श्रीलंका विएतनाम, मैक्सिको, पुर्तगाल, जैसे छोटे-छोटे देश भी बड़े गर्व से अपने देश के सभी कार्य अपनी भाषा में चलाते हैं। उन्हें हम वास्तव में स्वाधीन कह सकते हैं। हमें स्वराज्य तो मिला परन्तु सुराज्य अभी दूर है। हमारा संविधान भी हमारी संस्कृति, हमारी भाषाओं और हमारी परंपराओं को ध्यान में रखकर नहीं बनाया गया। वह अनेक देशों के संविधान का मिला-जुला रूप है। हमारी न्याय व्यवस्था आज भी गुलामी को ढो रही है। यहाँ तक कि ब्रिटेन की तरह कल तक माननीय न्यायाधीश को "माई लॉर्ड" कहकर संबोधित किया जाता रहा है। क्या यह न्याय व्यवस्था उस जनता के लिए है जिसे अंग्रेजी नहीं आती? यहाँ तक कि वकीलों की बहस भी गूढ़ अंग्रेजी में होती है जिसे शायद सामान्य अंग्रेजी पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी मुश्किल से समझ सके। संविधान की भी मूल प्रति को ही प्रामाणिक माना जाता है जबकि हिन्दी का अनुवाद महज एक औपचारिकता है जिसका कोई महत्त्व

नहीं। इसके अतिरिक्त संसद में जो जनप्रतिनिधि निर्वाचित होकर आते हैं उनमें से बहुत बड़ी संख्या में ग्रामीण क्षेत्रों व पिछड़े क्षेत्रों से चुनकर आए जन-प्रतिनिधि अंग्रेजी के व्यवहार में सक्षम नहीं होते कि वे सदन की कार्यवाही को समझ सकें यद्यपि वहाँ कहने को सभी भाषा-भाषियों के लिए उनकी भाषा में तत्कालिक अनुवाद की सुविधा है। इन परिस्थितियों में हम स्वयं को, वास्तव में, स्वाधीन नहीं कह सकते। हम तभी स्वाधीन कहे जाएँगे जब देश में सरकारी कामकाज और प्रशासन हमारी भाषा में हो और हमारी न्याय-व्यवस्था हमारी भाषा, संस्कृति और सुस्थापित परंपराओं के अनुसार चलाई जाए। जब हम गर्व से स्वयं को इंडियन नहीं भारतीय कह सकेंगे। इसके लिए हमें तथाकथित धर्मनिरपेक्षता (सेक्युलरिज्म) का दिखावा करने की आवश्यकता नहीं होगी। बिना धर्म का शासन अधर्म, अनैतिकता का शासन होगा। हमें आरंभ में धर्मशिक्षा अर्थात् नैतिकता और चरित्र निर्माण की शिक्षा को अनिवार्य करना होगा। तभी देशवासी चरित्रवान बनेंगे और वे विध्वंसकारी, देशद्रोही, आतंकवादी तत्त्वों का मुकाबला कर सकेंगे।

दी हिबिस्कस बिल्डिंग-5,
एपार्ट.-9बी, सेक्टर-50, गुड़गाँव-122018
(हरियाणा)

भारत के सर्वश्रेष्ठ महानायक–कृष्ण

–श्रीमती सन्तोष परमार

भारत के गाथा पुरुषों और इतिहास पुरुषों में सर्वोच्च नाम श्रीकृष्ण का ही जान पड़ता है। वैसे तो राम, मान्धाता, रघु, ययाति, नहुष, महापद्म नन्द, चाणक्य, चन्द्रगुप्त, समुद्रगुप्त, विक्रमादित्य, पतंजलि, विश्वामित्र, वशिष्ठ, भृगु, अर्जुन, कालिदास, सुभाष, सावरकर जैसे महामानवों के यश से भारत का आकाश देदीप्यमान है परन्तु जिस नीचाई से उठ कर जिस ऊँचाई तक श्रीकृष्ण पहुँचे, उतनी लम्बी यात्रा संभवतः किसी अन्य ने नहीं की।

जन्म कारागार में

श्रीकृष्ण का जन्म कंस के कारागार में हुआ। जन्म से पहले से उनकी मृत्यु आशंकित थी। कृष्ण के जन्म से पहले जन्मे सात भाइयों को कंस ने जन्मते ही मरवा डाला था। अतः कृष्ण के बचने की संभावना नहीं के बराबर थी।

श्रीकृष्ण चरित में कितनी गाथा है और कितना इतिहास इस बारीकी में इस लेख में हम नहीं जायेंगे। वह चरित्र जिस भी रूप में उपलब्ध है, उसे समग्र देखते हुए वह अनुपम, अद्वितीय जान पड़ता है।

श्रीकृष्ण राजा के पुत्र थे, परन्तु दास से भी बुरी हालत में जन्मे। राजमहल के विलासपूर्ण वातावरण में न पल कर गोकुल के मुक्त वातावरण में रहे। गौओं को चराते हुए प्रकृति और पशुओं के घनिष्ठ सम्पर्क में बचपन बिताया। गाय का दूध पी कर शारीरिक बल, सौन्दर्य और मेधा अर्जित की। कहते हैं कि वैसा रूपवान, मोहक, बलशाली, कलाकार वेणुवादक युवक पूरे इलाके में कोई नहीं था। यह तब, जब उनका रंग सांवला था। इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि जब उन्होंने किशोरावस्था में पदार्पण किया, तब सभी

किशोरियाँ उन पर रीझ गईं।

शौर्य और साहस

श्रीकृष्ण में वीरता और साहस कूट कूट कर भरा था। चाहे मरखने बैल को वश में करना हो, या काले नाग को पकड़ कर उसके दाँत तोड़ने हों, या अतिवृष्टि से आई बाढ़ से लोगों की रक्षा करनी हो, श्रीकृष्ण ही सबसे आगे रहते थे। उनकी अगुवाई में औरों का हौसला बढ़ता था। कृष्ण गोपियों के स्वामी नहीं सरवा थे। स्त्री-पुरुष में पति पत्नी के अलावा भी कोई नाता हो सकता है, इसे धर्मध्वजी लोग समझ नहीं सकेंगे।

ऐसे बली, गुणी व्यक्ति की ख्याति कंस तक पहुँचनी ही थी। उसने कृष्ण को बुलवा भेजा। सब समझ गये कि यह मृत्यु का बुलावा है कृष्ण बलराम को साथ ले कर मथुरा गये-आशंकित, इस विश्वास के साथ कि विजय उनकी ही होगी। बुलावा मृत्यु का ही था, पर वह कृष्ण की नहीं, कंस की मृत्यु का था। उस समय प्रकट हुआ कि कृष्ण लोकोत्तर पुरुष हैं।

स्वयं राजा नहीं बने

कंस को मारने के बाद कृष्ण स्वयं मथुरा के राजा बन सकते थे। अपने पिता वसुदेव को राजा बना सकते थे। परन्तु उन्होंने कंस के पिता उग्रसेन को राजा बनाया।

उसके बाद वह फिर गोकुल में गौएँ चराने, दूध पीने, मक्खन खाने और रास रचाने आ सकते थे। पर उन्होंने उधर मुड़ कर ही नहीं देखा। गोपियों का उनके लिए इतना ही मूल्य था।

शिवाजी के आदि गुरु

मथुरा के कंस का वध करने के बाद कृष्ण राजनीति में उलझते गये। शाल्व और जरासन्ध से शत्रुता ठनी। इस दृष्टि

से कृष्ण शिवाजी के पूर्वज गुरू थे। शक्तिशाली शत्रु के सम्मुख पलायन की रणनीति उन्होंने ही शुरू की। 'मर जायेंगे, पर युद्ध से पीठ नहीं दिखाएँगे'। यह आदर्श उन्होंने दूसरों के लिए छोड़ दिया। उनका कहना था कि लक्ष्य तो विजय है। वह जिस उपाय से प्राप्त हो, उसका ही अवलम्बन करना चाहिए।

अपने शौर्य और नीति-कौशल से कृष्ण ने एक-एक करके अपने सब शत्रुओं को उखाड़ फेंका। भीम और अर्जुन की सहायता से उन्होंने जरासन्ध को मारा। फिर अपने पुराने ईर्ष्यालु प्रतिद्वन्द्वी शिशुपाल को युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सबके देखते-देखते मार डाला। उस समय तक उनकी ख्याति इतनी बढ़ गई थी कि जब सर्वश्रेष्ठ राजा को अर्ध्य देने का प्रश्न उठा तो भीष्म पितामह ने कृष्ण का ही नाम सुझाया। गोकुल के ग्वाले के लिए इससे बड़ी उपलब्धि और क्या हो सकती थी?

दुर्बल के साथी

कृष्ण के चरित्र की बड़ी विशेषता यह है कि दो प्रतिद्वन्द्वियों में से दुर्बल पक्ष का साथ देते हैं। सत्ता पक्ष से उनका विरोध रहता है क्योंकि सत्ता शासक को भ्रष्ट कर देती है। कृष्ण ने कौरवों का साथ न दे कर पांडवों का साथ दिया। दुर्बल का साथ देना विपत्ति को निमंत्रण देना ही है। परन्तु कृष्ण विपत्तियों को झेलने में समर्थ थे और विपत्तियों से जूझने में उन्हें आनन्द आता था।

कौरवों को राजसभा में जब दुर्योधन के आदेश से दुःशासन के एकवस्त्रा द्रोपदी की साड़ी खींच कर उसे निर्वस्त्र करने की चेष्टा की, और भीष्म, द्रोण, कृपाचार्य, और कर्ण जैसे महारथी उचित अनुचित का निर्णय करने में असमर्थ रहे, तब श्रीकृष्ण को एक पल के लिए भी संशय नहीं हुआ। उन्होंने

दस हजार हाथियों के बल वाले दुःशासन से द्रोपदी की रक्षा की। भीष्म आदि सभी महारथियों के माथे पर सदा के लिए कलंक पुत गया।

निर्लिप्त जीवन

तालाब के जल में जैसे कमल होता है, वह पानी में रहता है, पर गीला नहीं होता, वैसे ही कृष्ण सब कर्म करते हुए भी निर्लिप्त रहते थे। यही उनका निष्काम कर्म योग था। 'कर्म करो, पर कर्मफल की इच्छा मत करो' यह निष्काम कर्मयोग का गलत अर्थ है। फल की इच्छा के बिना कोई भी व्यक्ति कर्म में प्रवृत्त ही क्यों होगा? 'कर्म फल में असक्ति मत रखो', यह सही अर्थ है। परीक्षा में उत्तीर्ण होने की इच्छा से परीक्षा दो; जी जान से यत्न करो कि पास हों। परन्तु यदि पास न हो पाओ, तो इतने दुखी मत हो जाओ कि आत्महत्या ही कर लो। फल मिल गया तो बहुत अच्छा, न मिला, तो भी कोई बात नहीं। 'निष्काम' के बजाय 'अनासक्ति' शब्द अधिक उपयुक्त रहेगा।

गीता का उपदेश

कृष्ण के व्यक्तित्व का सर्वोत्तम रूप प्रकट हुआ है उनके गीता प्रवचन में। यहाँ उन्होंने तत्व विवेचन में अपना ऋषि रूप प्रकट किया है। अन्य महापुरुषों में यह बौद्धिक तत्व अत्यन्त अल्प रहा है। गीता का चिन्तन बहुत गहन और अद्‌भुत है। इसी कारण कृष्ण अन्य सभी योद्धाओं, विचारकों, कलाकारों, विद्वानों से उसी प्रकार बहुत ऊँचे दिखाई पड़ते हैं, जिस प्रकार सागरमाथा (ऐवरेस्ट) हिमालय के अन्य शिखरों से ऊँचा दिखाई पड़ता है।

60ए, कमला नगर
दिल्ली–11006

धन की पवित्रता

-महात्मा चैतन्यमुनि

आज हमारे समाज में धन का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ गया है। क्योंकि आज मान-सम्मान की कसौटी भी केवल और केवल मात्र धन ही हो गया है। यदि आपके पास धन है तो आप जो चाहें कर सकते हैं भले ही बड़े से बड़ा पाप कर लें मगर धन का प्रयोग करके आप कानून की नजरों से भी बच सकते हैं। धन है तो आप बड़े से बड़े पद को हासिल कर सकते हैं। यहाँ तक कि किसी की हत्या करके भी आप बच सकते हैं। हमारे मनीषियों ने धन के इस महत्व को कम करने के लिए आश्रम और वर्ण-व्यवस्था का विधान किया था। इस व्यवस्था के अन्दर धन को इतना अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था। चार आश्रमों में से ब्रह्मचर्य आश्रम, वानप्रस्थाश्रम तथा संन्यास आश्रम के व्यक्ति धन नहीं कमाते थे। केवल गृहस्थ को ही धन कमाने का अधिकार था, शेष सभी आश्रमों की व्यवस्था का दायित्व गृहस्थ पर ही होता था मगर सभी गृहस्थी भी धन नहीं कमाते थे। चार वर्णों अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र को धन कमाने की चिन्ता नहीं होती थी क्योंकि यह कार्य केवल वैश्य का हुआ करता था। वैश्य द्वारा धन कमाने की भी कुछ मर्यादाएँ थीं। भले ही धन कमाना गृहस्थ का दायित्व था मगर सम्मान ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी और संन्यासी का अधिक होता था। उसी प्रकार वैश्य से अधिक प्रतिष्ठा और सम्मान ब्राह्मण का होता था। कालान्तर में ये व्यवस्थाएँ समाप्त हो गईं तथा प्रत्येक व्यक्ति धन कमाने के लिए दीवाना हो गया। आज ब्राह्मण की नहीं बल्कि धनवान की पूजा होती है। आज संन्यासी की भी नहीं बल्कि धनवान् की पूजा ही होती है।

धन का महत्व इतना अधिक बढ़ गया है कि आज लोग रातों-रात अमीर बनना चाहते हैं... साधन चाहे कैसा भी क्यों न हो मगर उन्हें तो बस धन कमाना है। धन कमाने के लिए

दूध वाला दूध में पानी मिलाने में पीछे नहीं हैं, व्यापारी अनाज आदि में मिलावट करने में पीछे नहीं हैं। बाबू घूस लेने में पीछे नहीं है। पुलिस, डॉक्टर, वकील, न्यायाधीश, नेता, अभिनेता सभी बड़े-बड़े घोटालों में संलिप्त हैं। लोग घोटाले करते हैं और फिर धन के बल पर उनसे बरी भी हो जाते हैं। लोग चार पैसे कमाने के लिए नकली दवाओं तक का धंधा करते हैं। उनकी दवाइयों से कितने लोगों की मृत्यु होती है, इसकी उन्हें चिन्ता नहीं है-उन्हें तो बस धन कमाना है, धन प्राप्ति की इस दौड़ में आज सभी निमग्न है। यहाँ तक कि आज बहुत से तथाकथित सन्त भी रात-दिन चेले-चेलियाँ बनाकर धन कमाने में ही लगे हुए हैं। इसीलिए समूची सामाजिक व्यवस्था चरमरा गई है। आज लड़के-लड़की का रिश्ता भी उनके गुण, कर्म तथा स्वभाव के आधार पर नहीं होता बल्कि वहाँ पर भी सौदा किया जाता है कि कितना धन दोगे फिर भी तृप्ति नहीं है क्योंकि बाद में कितनी ही नारियों को जिन्दा जला दिया जाता है। धन की इस दौड़ ने सबको पागल बना रखा है किसी ने बहुत सुन्दर कहा-

अन्यदीये तृणे रत्ने कांचने मौक्तिकेऽपि वा।
मनसा विनिवृत्तिर्या तदस्तेयं विदुर्बुधाः।।

पराए तृण, रत्न, स्वर्ण और मोती आदि को ग्रहण करने की मन से भी जो वृत्ति होती है वह भी स्तेय है, ऐसा ज्ञानी लोग कहते हैं। इसीलिए कहा जाता है कि मन से भी किसी पराई वस्तु को चुराने का विचार तक भी नहीं करना चाहिए क्योंकि उस कुवृत्ति का संस्कार व्यक्ति के सूक्ष्म शरीर पर पड़ जाता है। यह संस्कार ही व्यक्ति को बार-बार चोरी आदि करने की प्रेरणा देते है। चोरी प्रकट तथा अप्रकट दो प्रकार की होती हैं इस संबन्ध में कहा गया है-

परद्रव्यापहारोऽत्र प्रोक्तो द्विविध एव वै।
प्रकाशश्चाऽप्रकाशश्च, स ज्ञेयः सूक्ष्मया धिया।।

प्रकाशवंचनन्तत्र नानापण्योपजीविभिः। प्रच्छन्नवंचनं तद्यत्, स्तेनोऽऽटविकादिभिः।।

पराए पदार्थ का हरण दो प्रकार का बताया गया है। एक प्रकट और दूसरा अप्रकट। इस बात को सूक्ष्म बुद्धि से समझना चाहिए। प्रकट रूप से पराए पदार्थ का हरण वह है जो अनेक प्रकार के व्यापारी तथा व्यवसायी आदि द्वारा तोल-माप की गड़बड़ी या मिलावट आदि के द्वारा किया जाता है। अप्रकट रूप वह है जो रात के अन्धेरे आदि में किसी चोर द्वारा किया जाता है। ये दोनों प्रकार के ही स्तेय त्याज्य हैं। विशेषरूप से इस प्रकार से चोरी आदि करने वाले व्यक्ति की आत्मिक उन्नति तो संभव है ही नहीं। इसीलिए वेद हमें आदेश देता है-**तेन त्यक्तेन भुंजीथा गृधः कस्य स्विद्धनम्।** (यजु.40-1) अर्थात् हम अपनी वस्तुओं का प्रयोग भी त्यागमयी भावना से ही करें। इस प्रकार की निष्काम भावना से ही हम संसार के बन्धन से मुक्त रह सकते हैं। हम इस भावना को परिपक्व बनाएँ कि जो कुछ भी हमारा है। वह अन्ततः उस परमपिता परमात्मा का ही है, हमें तो मात्र प्रयोग करने के लिए ही मिला हुआ है। समस्त सम्पदा का असली मालिक तो परमात्मा ही है मगर इस संसार रूपी मेले में हम इतना खो जाते हैं कि अविवेकी होकर पुण्य के स्थान पर पाप ही कमाते चले जाते हैं। यह संसार रूपी मेला है भी बड़ा आकर्षक, कदम कदम पर नए से नए प्रलोभन हमें गिराने के लिए उपस्थित हैं। कहाँ तो हमें इस सम्पदा का प्रयोग लोक-परलोक संवारने के लिए करना था और कहाँ हम इसी में खो कर रह जाते हैं। बल्कि दूसरों की सम्पदा को भी सदा अपनी बनाने की ताक में रहते हैं। यही हमारे बन्धन का कारण है। सांसारिक विषयों में एक बार व्यक्ति गिरता है तो फिर गिरता ही चला जाता है। जितना ही वह उन विषयों को भोगता चला जाता है उतना ही उन्हें भोगने की इच्छा और

भी अधिक प्रबल होती जाती है। इसलिए कहा गया है कि पराई वस्तु को प्राप्त करने के संस्कार ही पैदा नहीं होने देने चाहिए। यदि एक बार भी जरा सी छूट दे दी तो उस गहरे गढ्ढे से निकलना कठिन से कठिनतम होता चला जाएगा। इसलिए जितना शीघ्र ही दूसरे के धन को हड़पने के विचार को त्याग देना चाहिए। इस प्रकार के व्यक्ति को ही पण्डित कहा गया है-

मातृवत् परदारेषु, परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु, यः पश्यति स पण्डितः।।

जो मनुष्य पराई स्त्रियों में अपनी माता के समान, पराए धन में मिट्टी के ढेले के समान और सब प्राणियों में अपने समान भावना रखता है। वही वास्तव में पण्डित है। मनु महाराज धन की पवित्रता को प्रमुख कहा है-

सर्वेषामेव शौचनामर्थशौचं परं स्मृतम।
योऽर्थे शुचिर्हि च शुचिर्न मृद्वारिशुचिः शुचिः।।(मनु.5-106)
नेहेतसथान् प्रसंगेन न विरूद्धेन कर्मणा।
न विद्यमानेष्वर्थेषु नार्त्यामपि यतस्ततः।। (मनु.4-15)
अधार्मिको नरो यो हि यस्य चाप्यनृतं धनम्।
हिंसारतश्च यो नित्यं नेहासौ सुखमेधते।।(मनु.4-170)
नाधर्मश्चरितो लोके सद्यः फलति गौरिव।

सभी प्रकार की शुद्धियों में धन सम्बन्धी शुद्धि सबसे मुख्य है। जो मनुष्य धन के विषय में शुद्ध है, वास्तव में वही शुद्ध है-मिट्टी और जल से शुद्ध हुआ पदार्थ शुद्ध नहीं है। व्यक्ति को चाहिए कि वह कभी किसी गलत ढंग से धन का संचय न करे, न विरुद्ध कर्म से न विद्यमान पदार्थ होते हुए उनको गुप्त रख के, दूसरे छल करके और चाहे कितना ही दुःख पड़े तदपि अधर्म से द्रव्य का संचय कभी न करे। जो अधार्मिक मनुष्य है और जिसका अधर्म से संचित किया हुआ धन है और जो सदा हिंसा में अर्थात् वैर में प्रवृत्त रहता है, वह इस

लोक और परलोक अर्थात् परजन्म में सुख को कभी नहीं प्राप्त हो सकता। मनुष्य निश्चित् करके जाने कि इस संसार से जैसे गाय की सेवा का फल दूध आदि शीघ्र नहीं होता, वैसे ही किए गए अधर्म का फल शीघ्र नहीं होता। इसलिए आदेश दिया गया है-

परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातौं धर्मवर्जितौ।
धर्म चाप्यसुखोदकं लोकविकुष्टमेव च।। (मनु.4-176)

यदि बहुत सा धन राज्य और अपनी कामना अधर्म से सिद्ध होती हो तो भी अधर्म सर्वथा छोड़ दें और वेद-विरुद्ध धर्माभास जिसके करने से उत्तर काल में दुःख और संसार की उन्नति का नाश हो वैसा नाममात्र धर्म और कर्म कभी न किया करें।

जिस समाज में पाप की कमाई से अपना घर भरने की वृत्ति बन जाती है वहाँ आपसी प्रेम एवं सौहार्द और आत्मिक शान्ति समाप्त हो जाती है। सबसे बड़ी हानि यह होती है कि सन्तान पर कुसंस्कार पड़ने से परिवार बिगड़ते हैं और उनके बिगड़ने से सामाजिक समरसता ही समाप्त हो जाती है। अर्थ-प्रधान चिन्तन व्यक्ति को हृदयहीन बना देता है। जो लोग अधर्म से धन कमाकर सुख-शान्ति प्राप्त करने की सोचते हैं उन्हें स्मरण रखना चाहिए कि ऐसा होना संभव नहीं है। धन की अपनी सीमाएँ हैं- स्मरण रहे कि धन से उत्तम स्वास्थ्य नहीं मिल सकता है, धन से विद्या नहीं मिल सकती है, धन से सन्तोष नहीं मिल सकता है, धन से माता, पिता, भाई, पुत्र और पति-पत्नी नहीं मिल सकते हैं, धन से मित्रता नहीं मिल सकती है, धन से सुसंस्कार नहीं मिल सकते हैं, धन से सुख-शान्ति नहीं मिल सकती है, धन से मानसिक सबलता नहीं मिल सकती और धन से आत्मिक आनन्द नहीं मिल सकता।

महर्षि दयानन्द धाम,महादेव
सुन्दरनगर-175019 (हि.प्र.)

दयानन्द के उद्घोष के राजनीतिक मंच पर उद्गाता तिलक

स्वतन्त्रता माँगने से नहीं मिलती उसे छीनना पड़ता है। प्रथम महायुद्ध के पश्चात् जब भारतवासियों को, रोलट एक्ट का उपहार मिला तो सारे देश में विद्रोह उठ खड़ा हुआ। गाँधी जी ने इस एक्ट का खुल्लम-खुल्ला विरोध किया। इन दिनों तिलक इंग्लैण्ड में थे।वह उसी समय भारत लौट आये। अमृतसर में कांग्रेस का वार्षिक अधिवेशन हो रहा था। इस अधिवेशन में बाल गंगाधर तिलक ने अपने ओजपूर्ण भाषण में कहा- देश प्रस्ताव पास कर देने से, स्वतंत्र नहीं होगा। रोटी के एक टुकड़े से लाखों भूखे पेट नहीं भर सकते। स्वतन्त्रता के पौधे को सींचने के लिए भारत के लाखों युवकों के रक्त की आवश्यकता है।

लोकमान्य के इन शब्दों में आग थी, आग की प्रज्वलित लपटें थीं। महात्मा तिलक का पूर्ण नाम बलवंत राय गंगाधर तिलक है। किन्तु आपको बाल गंगाधर तिलक के नाम से भारतवर्ष स्मरण करता है। बाल्यावस्था में ही अपने पिता की छत्र-छाया से वंचित हो गये थे। आपकी शिक्षा-दीक्षा आपकी माता जी की देख-रेख में पूर्ण हुई। 1876 में आपने बी.ए. आनर्स करके वकालत पास की। किन्तु इसको पेशे के रूप में नहीं अपनाया। वह तो देश की सेवा करने के लिए अवतीर्ण हुए थे और मरण पर्यन्त वह देश की सेवा में रत रहे।

राष्ट्रीय स्कूल की स्थापना

आपके राजनीतिक एवं सामाजिक जीवन का आरम्भ स्वतन्त्र राष्ट्रीय स्कूल स्थापित करने से होता है। यह स्कूल श्री विष्णु शास्त्री और तिलक ने स्थापित किया था। श्री शास्त्री पहले सरकारी पद पर थे किन्तु सरकार से रुष्ट होकर आपने स्कूल की स्थापना की। यह एक ऐसा स्कूल था जिसमें पढ़ कर महाराष्ट्रीय युवक स्वतन्त्रता की भावना लेकर निकलते थे।

पत्रकारिता

देश सेवा के लिए आवश्यक था कि जनता में प्रचार किया

जाये। इसके लिए पत्रों की आवश्यकता थी। इन्हीं दिनों शास्त्री जी ने दो पत्र प्रकाशित किये। एक मराठा और दूसरा केसरी। इन पत्रों में महात्मा तिलक ने जो आग भरी उससे जनता के मन में विदेशी सत्ता के प्रति भारी विद्रोह भर गया। आपको सरकार का कोपभाजन बनना पड़ा। इसके परिणामस्वरूप सरकार ने आपके कुछ लेखों पर मुकदमा चलाया। फलस्वरूप आपको कारावास में बन्द कर दिया गया।

राजनीति में

कारावास मुक्त होकर आपने राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेना आरम्भ कर दिया। आपने राष्ट्रीय हाईस्कूल को कालिज बनाया। पाँच वर्ष तक लोकमान्य इस कालिज को बड़ी सफलता से चलाते रहे। दूसरी ओर मराठा और केसरी में लेख लिख कर युवकों को भी प्रेरणा देते रहे। इन्हीं दिनों महात्मा तिलक ने महाराष्ट्रीय लोगों में उत्साह भरने के लिए छत्रपति शिवाजी की जयन्ती मनाने का आयोजन किया।

हत्या का आरोप

आपकी राजनीतिक गतिविधियों से सरकार विचलित हो उठी थी। आपको कुचलने के लिए सरकार ताक में रहती थी। जिन दिनों पूना में प्लेग का जोर था उन दिनों बीमारी की रोक थाम के लिए सरकार और तिलक में अनबन हो गई। आपने इस सम्बंध में सरकार के विरुद्ध लिखना आरम्भ कर दिया। जिन दिनों महारानी विक्टोरिया की रजत जयंती मनाई जा रही थी तभी कुछ अंग्रेज अधिकारियों की हत्या हो गई। जिसके अपराध में महात्मा तिलक को भी गिरफ्तार कर लिया गया। यद्यपि इस हत्या से इनका कोई सम्बन्ध न था। अदालत ने आपको 18 मास का कारावास दण्ड दिया।

छः वर्ष कारावास दण्ड

तीसरी बार महात्मा तिलक को उस समय कारावास का दण्ड दिया गया जब बंगाल के एक युवक खुदीराम बोस ने दो अंग्रेज स्त्रियों की हत्या कर दी। सरकार ने सन्देह में तिलक की तलाशी ली। इनके पास कुछ आपत्तिजनक लेख मिले जिससे सरकार के सन्देह की पुष्टि हो गई। आपको गिरफ्तार

कर लिया गया। इस मुकदमे में तिलक ने पाँच दिन तक ऐसे तर्क दिये कि सुनने वाले दंग रह गये, जिससे महात्मा तिलक की ख्याति तथा मान और भी बढ़ गया। किन्तु अदालत ने आपको छः वर्ष के कालेपानी का कारावास दण्ड दिया। इस भारी दण्ड से समूचे देश में सरकार के विरुद्ध आंदोलन किये गये। हत्या, लूट तथा आग की घटनाए हुईं। इससे सरकार घबरा गई। उसने महात्मा तिलक को कालेपानी का दण्ड बदल कर माँडले जेल में भेज दिया।

गीता रहस्य

माँडले जेल में आने से तिलक पर यहाँ के जलवायु का बुरा प्रभाव पड़ा। आपको कई रोगों ने घेर लिया। परन्तु आप हारने वाले सेनानी न थे। इस कारावास की लम्बी अवधि में आपने गीतारहस्य की रचना की। गीता पर जो आपने भाष्य लिखा वह बहुत ऊँचा स्थान रखता है। कर्मयोग की आपने जो परिभाषा की है उसे पढ़ कर कोई भी जीवन से हारा हुआ मानव नवजीवन का अनुभव करने लगता है।

नया जीवन

प्रथम महायुद्ध में महात्मा गाँधी ने अंग्रेज सरकार को सहयोग देने की घोषणा की। इसका तिलक ने भारी विरोध किया। युद्ध बन्द होने के बाद सरकार ने भारत को रोल्ट एक्ट के रूप में उपहार दिया। महात्मा तिलक को जब रोल्ट एक्ट का पता चला तो वह बहुत बिगड़े और भारतवासियों के नाम एक अपील की जिसका परिणाम यह हुआ कि सरकार ने एक जाँच समिति स्थापित की। यह समिति भारत आई किन्तु व्यर्थ।

तिलक का जीवन संघर्षों से भरपूर था। इनका एक-एक शब्द देश के जीवन में नये प्राणों का संचार कर देता था। आपने सर्वप्रथम भारतवासियों को "स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" का महामन्त्र दिया। और स्वयं वह इस अधिकार के लिए जीवन भर लड़ते रहे।

22 जुलाई 1920 को बम्बई में महात्मा तिलक की 56वीं वर्षगाँठ मनाई गई और 31 जुलाई को इनका देहान्त हो गया। इस महामानव के उपकारों से सारा देश युगों तक ऋणी रहेगा।

क्रांति का केन्द्र थी बासौद की मस्जिद

(10 मई 1857 में शुरु हुए प्रथम स्वाधीनता संग्राम का मजबूत गढ़ था यह गाँव)

-अमित राय जैन

इतिहास के नाम पर हम बड़े नायकों को ही जानते हैं। उनके साथ रहकर या उनकी प्रेरणा पाकर लड़ने-मरने वाले आम लोगों को प्रायः नहीं जानते। इतिहास की धारा बदलने का काम आम लोगों ने ही किया है। छोटी-छोटी जगहों के छोटे-छोटे नायकों ने। उनकी भूमिका किसी महान चरित्र से जरा भी कम नहीं है। जैसे, 1857 में हुए प्रथम भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में उत्तर भारत के कई छोटे शहरों और गाँवों ने अपने तरीके से योगदान किया।

10 मई, 1857 को लाइट कैवेलरी की तीसरी रेजिमेंट के बागी सिपाही भारतीय सैनिकों को कैद से छुड़ाने के लिए मेरठ बंदीगृह पर टूट पड़े। सभी 85 सैनिक क्रांतिकारियों की बेड़ियाँ काट दी गईं। 1400 कैदियों को मुक्त कर दिया गया। इस जनविद्रोह की आग पूरे पश्चिमी उत्तरप्रदेश के ग्रामीण इलाकों में फैल गई। तत्कालीन मेरठ जिले के बड़ौत-बागपत क्षेत्र से भी अंग्रेजों को खदेड़ दिया गया और लोगों ने अपने इलाकों को आजाद घोषित कर दिया। लेकिन इसके तुरंत बाद अंग्रेजी सरकार का दमनचक्र प्रारंभ हुआ जिसमें इस क्षेत्र के हजारों साधारण किसानों ने शहादत दी। ये किसान अपने साधारण कृषि यंत्र या हथियार लेकर प्रशिक्षित और आधुनिक अस्त्र-शस्त्रों से लैस अंग्रेजी सैनिकों के खिलाफ लड़े। यह मामूली बात नहीं थी। देश के लिए मर-मिटने का उनका जज्बा इसके पीछे था।

किसानों की सेना

बड़ौत के निकटवर्ती गाँव बिजरौल के निवासी बाबा शाहमल सिंह मावी ने देशखाप चौरासी मुखिया चौधरी श्यो सिंह के आह्वान पर इस क्षेत्र में क्रांति की बागडोर सँभाली और गाँव-गाँव घूम कर आजादी की चेतना पैदा की। उनकी

जोशीली बातों से यहाँ का आमजन अंग्रेजी हुकूमत को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए प्रेरित हुआ। विभिन्न जाति-बिरादरी के मुखियाओं ने अपने-अपने समुदाय को क्रांति में शामिल होने के लिए प्रेरित करने की जिम्मेदारी ली। उनके सम्मिलित प्रयासों से 8000 साधारण किसानों की सेना का गठन हुआ जो उस युग की एक असाधारण घटना थी। ब्रिटिश सरकार के तत्कालीन दस्तावेजों से पता चलता है कि इन क्रांतिकारियों से हुकूमत इतना भय खाती थी कि उनके दमन के लिए तोपों व रायफलों से युक्त फ्रांसीसी सैनिकों की टुकड़ियों को इस क्षेत्र में भेजा गया।

इधर ब्रिगेडियर विल्सन अपने सैनिकों के साथ 4 जून को अलीपुर पहुँचा, उधर शाहमल के नेतृत्व में क्रांतिकारियों ने रसद व गोला-बारूद से लदे अंग्रेजी पल्टन के 500 जानवर पकड़ लिए। क्रांतिकारियों ने बासौद गाँव की जामा मस्जिद को अपना गुप्त अड्डा बनाया और वहाँ अंग्रेजों से लूटा गया सारा अनाज व गोला-बारूद एकत्र कर लिया। मेरठ जेल से छूटे सैंकड़ों क्रांतिकारियों के साथ इस क्षेत्र के 3500 गुर्जर वीर भी बासौद में आ जुटे।

विचार-विमर्श के बाद निर्णय लिया गया कि यमुना के उस पार हरियाणा (तत्कालीन पंजाब) के राई गाँव तक बने पुल से अंग्रेजी रसद पहुँचने का एकमात्र रास्ता नष्ट कर दिया जाए। निर्देश पाते ही क्रांतिकारियों ने हथौड़ों व कुल्हाड़ियों से नावों को जोड़कर बनाया हुआ पुल तोड़ दिया। जनरल हैबेट के आदेश पर फ्रांसीसी सैनिकों की टुकड़ी हिंडन नदी पार कर डौला गाँव पहुँची, पर शाहमल अंग्रेजों को चकमा देकर क्रांतिकारी सैनिकों के साथ अपने मुख्यालय बासौद गाँव की मुस्लिम बहुल क्रांतिकारी जनता ने उनके साथ मर-मिटने की कसम खाई। 17 जुलाई को अंग्रेजों की सेना तोपों के साथ बासौद गाँव पहुँच गई। लेकिन शाहमल और उनके क्रांतिकारी साथियों को नहर के किनारे-किनारे बड़ौत की ओर सुरक्षित

निकाल दिया गया। तब अंग्रेजी फौज ने अपना क्रूरतम रवैया दिखाया। अंग्रेज कलक्टर डनलप ने अपनी 'खाकी रिसाला' नामक पुस्तक में लिखा है कि बासौद गाँव के सभी बूढ़े-जवान अंग्रेजों से मुकाबला करने के लिए खड़े हो गए।

जबरदस्त संघर्ष हुआ जिसमें यहाँ के सैकड़ों क्रांतिकारियों को मार डाला गया। 1857-58 के 'नैरेटिव ऑफ इवेंट्स' दस्तावेजों में विवरण मिलता है कि बासौद गाँव की जामा मस्जिद को भी तोप से उड़ा दिया गया और वहाँ मौजूद हजारों मन अनाज व गोला-बारूद में आग लगा दी गई। बासौद में भयंकर कत्लेआम मचाकर अंग्रेज जब आगे बढ़े तो गाँव के बाहर तालाब के किनारे गाँव के बचे क्रांतिकारियों ने उन पर हमला बोल दिया। उन सबको मौत के घाट उतार दिया गया।

तीर्थभूमि की मान्यता

नैरेटिव में लिखा है कि सैकड़ों बासौद निवासियों को मारने के बाद बाकी बचे 180 क्रांतिकारियों की भी शहादत यहीं हुई। सोचा जा सकता है कि बासौद के लोगों के भीतर किस कदर साहस भरा था। वे विश्व के सर्वाधिक शक्तिसंपन्न व प्रशिक्षित फौज को देखकर भी घबराए नहीं और अंतिम साँस तक उसका मुकाबला किया। बासौद गाँव की शहादत 1857 के संग्राम की सबसे बड़ी व अद्वितीय घटना है। इससे भी अफसोसनाक बात यह कि 1857 से 1947 तक बासौद गाँव अंग्रेजों के जबरदस्त शोषण का शिकार रहा। अंग्रेजी शासन ने इसे बागी गाँव घोषित कर यहाँ की जमीन जब्त कर ली और लोगों को भूखों मरने के लिए छोड़ दिया। 1857 की क्रांति की डेढ़ सौवीं जयंती पर शाहजाद राय शोध संस्थान की पहल पर विशेष आयोजन हुए। शहीद नमन यात्रा आयोजित कर बासौद के सैकड़ों अनजान शहीदों को श्रद्धांजलि दी गई। सरकार को चाहिए कि वह यहाँ मौजूद जामा मस्जिद को 1857 की तीर्थभूमि के रूप में मान्यता प्रदान करे और इसे एक प्रमुख ऐतिहासिक स्थल के रूप में विकसित करें।

भारत, दैट इज इंडिया

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आजादी के बाद से चली आ रही एक परंपरा को आते ही बदल दिया। शपथ ग्रहण समारोह के लिए आमंत्रित सार्क देशों के सभी राष्ट्राध्यक्षों से उन्होंने अंग्रेजी के बजाय हिन्दी में बातचीत की। यह पहला मौका है जब किसी प्रधानमंत्री ने राष्ट्रभाषा हिन्दी को विदेशी नेताओं से बातचीत का माध्यम बनाने का फैसला किया। इससे पहले हिंदी को 'सम्मान' देने की गरज से एकाध अंतरराष्ट्रीय मंचों पर हिंदी में बात रखने के उदाहरण जरूर मिलते हैं। बतौर विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी का संयुक्त राष्ट्र में दिया गया भाषण अक्सर याद किया जाता है। पूर्व प्रधानमंत्री चंद्रशेखर ने भी सार्क सम्मेलन को हिन्दी में सम्बोधित किया था। बतौर प्रधानमंत्री बाजपेयी अंग्रेजी में बात करने वाले राष्ट्राध्यक्षों से तो अंग्रेजी में बात करते थे, लेकिन अंग्रेजी के बजाय अपनी राष्ट्रभाषा में बोलने वालों से बातचीत में वह हिन्दी का ही प्रयोग करते थे। उनके इस फैसले को कभी प्रचारित नहीं किया गया, यह और बात है। मोदी का यह फैसला इन छिटपुट प्रयोगों से अलग है। अब से पहले किसी भारतीय प्रधानमंत्री ने राष्ट्रभाषा को विदेशियों के साथ संवाद का सहज माध्यम नहीं बनाया। मोदी के फैसले की अहमियत इसी रूप में रेखांकित की जाएगी। कहा जा सकता है कि प्रधानमंत्री का सचेत ढंग से अंग्रेजी छोड़कर हिन्दी में अपनाना दुनिया के सामने भारत को उसके असली स्वरूप में रखने की शुरुआत है। स्वयं को हम अभी तक अपने बारे में दुनिया की राय से ही परिभाषित करते थे। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में दर्ज 'इंडिया दैट इज

भारत' से यही अर्थ ध्वनित होता है। एक नव-स्वतंत्र देश के लिए ऐसा करना स्वाभाविक भी था, लेकिन यह स्थिति अनंत काल तक तो नहीं बनी रहेगी। आज के जमाने में किसी भी प्रोफेशनल के लिए जितनी अंग्रेजी जानना जरूरी है, उतनी भारतीय प्रधानमंत्री को भी आनी चाहिए। लेकिन जिसतरह एक इंजीनियर की कद्र उसकी चाल-ढाल, कपड़े-लत्ते या बोल-चाल से नहीं, उसके इंजीनियरिंग स्किल की वजह से ही होती है, उसी तरह हमारे प्रधानमंत्री को दुनिया में सिर्फ और सिर्फ एक राष्ट्राध्यक्ष के रूप में उनके कौशल से ही पहचाना जाना चाहिए। हाँ, इस बात को इतना खींचने की जरूरत नहीं है कि इससे अंतर्राष्ट्रीय समीकरण और देश की भाषा नीति प्रभावित होने लगे। भाषा कोई रुकी हुई ठोस चीज नहीं है। यह एक बहती हुई नदी है। निरंतर परिवर्तनशील, निरंतर चलायमान। अपने कामकाज और व्यापार का दायरा बढ़ाने के लिए आज दुनिया के सारे देश अंग्रेजी सीखने में जुटे हैं। जर्मनी, जापान और फ्रांस जैसे अपनी अपनी भाषा को लेकर बेहद अड़ियल समझे जाने वाले देश ही नहीं, तीन दशक पहले तक खुद को सचेत ढंग से बाकी दुनिया से काट कर रखने वाला चीन भी ग्लोबल दौर में अंग्रेजी को अपने घर की चीज की तरह बरत रहा है। इसलिए भारतीय प्रधानमंत्री द्वारा हिन्दी को विदेशियों से बातचीत की भाषा बनाने को अपनी जमीन पर मजबूती से खड़े होने की कोशिश की तरह देखा जाना चाहिए। अंग्रेजी से कतरा कर निकलने या उसे गैरजरूरी बताने के प्रयास की तरह नहीं।

तुलसी मीठे वचन ते सुख उपजे चहुं ओर

–श्री भद्रसेन

सभी प्रिय वचन सुनकर प्रसन्न होते हैं और यह एक अनोखी बात है कि बोलने में कुछ भी खर्च नहीं होता। तब मधुर वचन बोलने में कंजूसी क्यों? तभी तो कहा है–

"तुलसी मीठे वचन तैं सुख उपजै चहुँ ओर।
वशीकरण इक मंत्र है तज दे वचन कठोर।।
ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोए।
औरन को शीतल करे आपाहु शीतल होय।।
कागा का को धन हरै कोयल का को देय।
मीठे वचन सुनाय के यश अपनो कर लेय।।

मानव समाज के व्यवहार पर विचार करने से हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि मानव समाज के पारस्परिक व्यवहार का मुख्य और पहला आधार बोलचाल है। हम बोल कर ही परस्पर अपने भावों को प्रकट करते हैं। इसके बिना पारस्परिक भाव संप्रेषण का व्यवहार सिद्ध नहीं हो सकता। भावों का आदान–प्रदान पारस्परिक व्यवहार का मूल आधार है और भाव संप्रेषण भाषा के माध्यम से ही होता है क्योंकि शब्दों में पदार्थों, भावों को प्रकट करने की शक्ति छिपी हुई है।

जीवन में शिक्षा का जो महत्त्व है, वह किसी से छिपा हुआ नहीं है। वस्तुतः विद्या ही वह कामधेनु, कल्पलता, कल्पवृक्ष है, जिसके द्वारा हम हर अभीष्ट को साधने में समर्थ होते हैं तथा यह एक ऐसा रंग है जिससे सारे चित्र रूपवान होते हैं। ऐसी सर्वसाधिका शिक्षा की प्राप्ति का आधार भी अधिकतम वाणी, भाषा ही है। बोलचाल के बिना मानव

व्यवहार में सरलता, सरसता और सम्भावना की कल्पना भी नहीं की जा सकती। तभी तो महाकवि दण्डी ने कहा है-यदि भावों के संप्रेषण का साधन शब्द व्यवहार न होता तो यह भरा-पूरा संसार अन्धकारमय बन जाता-

इदमन्धन्तमः कृत्स्नं जायते भुवनत्रयम्।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरा संसारं न दीप्यते।।

सामाजिकता, अपनत्व अनुभव करके रिश्तेदारों और मित्रों से हमें जो सुख मिलता है, उस मैत्रीजन्य सुख का मूलमन्त्र मधुर भाषण ही है क्योंकि मधुरभाषी अपने 'मीठे वचन से सबको आपू कर लेय।' इसीलिए वेद ने आदेश दिया है कि अब अपनत्व और विश्वास बढ़ाने के लिए सदा प्रिय और हितकर वचन बोलें और मैं भी बोलूँ? यतो हि कटु-अहितकर वचनों से अपने भी पराए हो जाते हैं। तभी तो कड़वे बोल वालों को कोई भी पास में फटकने नहीं देता। बोलों से कोई अपना बनता है, तो बोलों से ही कोई पराया हो जाता है क्योंकि वाणी से दोनों तरह के बोल बोले जाते हैं। शस्त्र का घाव तो समय के साथ भर जाता है पर वाणी का घाव महाभारत के रूप में बदल जाता है-

मधुमतीं वाचं वदतु शन्तिवाम्। (अथर्व. 3,30,2)
वाचा वदामि मधुमत्। (अथर्व. 1,34,3)
मधुमतीं वाचमुदेयम्। (अथर्व. 16,2,2)
ययैव संसृजे घोरं तयैव शान्तिरस्तु नः।(अथर्व. 19,9,3)

रोहते सायकैर्विद्धं वनं परशुना हतम्।
वाचा दुरुक्तं बीभत्सं न संरोहति वाक्क्षतम्।।
(पंच. 3,1,10)

विवेकीजन मन रूपी छाननी से विचार कर हितकारक, मधुसदृश वाणी का प्रयोग शिष्टतापूर्वक करते हैं, उनका मित्र

वर्ग चिरस्थाई, वृद्धि युक्त होता है और उनकी वाणी में कल्याणकारी वाणी का वास होता है क्योंकि विचार-विनिमय और भाव-प्रकाशन से होने वाले मनुष्यों के पारस्परिक व्यवहारों का आधार या साधन वाणी ही है। वाणी (भाषा) के बिना पारस्परिक व्यवहार-सिद्धि की कल्पना एक अत्यन्त कठिन स्थिति है। वह तो गूँगों की दुनिया होगी, जहाँ विवशता, असमर्थता, कष्ट, दुःख, अभाव तथा तड़पन के सिवाय और कुछ भी नहीं। पारस्परिक व्यवहार की सिद्धि में भाषा के महत्त्व को देखते हुए यह सरलता से कहा जा सकता है कि जब हम शिष्टता के साथ सत्य, प्रिय और हितकारी वाणी का उचित उपयोग करते हैं, तब हमारा व्यवहार-

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो, यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते, भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि।।

ठीक इस प्रकार से सम्पन्न होता है। परन्तु जब बिना विचारे या जानबूझकर वाणी का अनुचित प्रयोग होता है तो उससे अनर्थ के अतिरिक्त और कुछ भी परिणाम नहीं निकलता। मनुस्मृति में कहा है

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात्, मा ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।

बी-2, 12/17 बी, शालीमार नगर,
होशियारपुर-146001

भारत स्वातन्त्र्य और ऋषि दयानन्द–2

–सत्यप्रिय शास्त्री

मृत्यु का रहस्य

अतः तत्कालीन सरकार ने रियासत के राजाओं, विशेषकर महर्षि प्रभावाधीन राजाओं, को एक परिपत्र प्रेषित किया जिसका मुख्य ध्येय महर्षि के प्रभाव से उनके मुक्त करना प्रतीत होता है, जिसमें कुछ प्रश्नों के उत्तर माँगे थे जो कि रयासत के अधिकार से सम्बन्धित थे। महर्षि ने जोधपुर की विवशता को देखते हुए उसका उचित उत्तर लिखवा दिया। सरकार के उत्तरदाता का चित्र माँगने पर राजा ने सरलता से महर्षि का चित्र भेज दिया। कहते हैं कि इस पर राजस्थान के पोलिटिकल एजेन्ट पर दबाव पड़ा कि तुम्हारे राज्य में ऐसा खतरनाक व्यक्ति घूम रहा है और तुम उसका कोई इलाज नहीं सोचते। इससे पूर्व वायसराय लन्दन को अपनी राय भेज चुका था, जिसमें महर्षि को एक विद्रोही फकीर कहा गया था। इसके साथ ही डॉ. अलमर्दान खाँ के उपचार काल में महर्षि की अवस्था सुधरने की अपेक्षा निरन्तर बिगड़ते ही जाना सिद्ध करता है कि अंग्रेज और मुस्लिम शक्तियों के सम्मिलित षड्यन्त्र का शिकार महर्षि हुए है। भारत के स्वाधीनता संग्राम में दोनों शक्तियों का गठ–जोड़ देशभक्त शक्तियों की समाप्ति के हेतु पदे पदे दृष्टिगोचर होता है, अन्त में तो देश विभाजन के रूप में उसका बीभत्स रूप सामने आया है। जिस राजा के महर्षि अतिथि थे, वह भी मौन रूप से इन सम्पूर्ण काण्ड को विवश हुआ देखता रहा, क्योंकि उसे पता था कि यदि तू ने सत्यता प्रकट करने का दुस्साहस किया तो अंग्रेज सरकार किसी न किसी बहाने गद्दी से उतारकर खात्मा कर देगी, अन्यथा राजा के सामने

एक वेश्या और पाचक की क्या हिम्मत थी कि राजा के गुरु और मान्य अतिथि को जहर देकर मार दे। वेश्या को तो अपना पाप छिपाने का बहाना बनाया गया था। अजमेर निवासी श्री भागरामजी, जो कि महर्षि के ऊपर विशेष गुप्तचर छोड़े गये थे, का कहना था कि यदि इण्डिया आफिस में स्थित तत्कालीन वायसरायों के गुप्तपत्र और दस्तावेजों को पढ़ा जावे तो महर्षि दयानन्द की मृत्यु का वास्तविक रहस्य सामने आ सकता है। इन प्रमाणों से पूर्वाग्रहमुक्त सत्यान्वेषी पुरुष इस परिणाम पर पहुँचेगा कि महर्षि का आज अंग्रेज सरकार ने अपने साम्राज्य का घोर विरोधी मानकर एक विशाल गुप्त षड्यंत्र के द्वारा जहर देकर बलिदान कर दिया। इस प्रकार 1857 के पश्चात् भारत का राजनैतिक दृष्टि से पूर्ण जागरण करने के कारण महर्षि दयानन्द सरस्वती का बलिदान हुआ था, शनैः शनैः आज यह सत्य संसार के समक्ष मुखरित होता जा रहा है। महर्षि दयानन्द के पश्चात् उनके शिष्यों ने कांग्रेस के मंच से, जिसको एक कूटमति अंग्रेज ने ब्रिटिश सरकार के इंगित और आयोजन के अधीन उसकी जड़ों को सशक्त करने के उद्देश्य से स्थापित किया था, राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान कर उसके माध्यम से महत्त्वपूर्ण प्रशंसनीय कार्य किया। भारत की स्वाधीनता के हेतु कांग्रेस के मंच से दो प्रकार की विचारधाराओं ने अपने-अपने क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कार्य किया- एक गाँधीजी के नेतृत्व में अहिंसात्मक सत्यग्रहों के द्वारा और दूसरे सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलनों के जरिये। उक्त दोनों ही मोर्चों पर महर्षि दयानन्द के अनुयायी प्रथम पंक्ति में खड़े दिखाई देते हैं, प्रथमतः गाँधी मार्ग द्वारा किये गये योगदान की संक्षिप्त चर्चा उपस्थित की जा रही है।

.....क्रमशः

MIND BLOWING FACTS ABOUT SANSKRIT

Sanskrit has the highest number of vocabularies than any other language in the world.

102 Arab 78 crore 50 lakh words have been used till now in Sanskrit. If it will be used in computers & technology, then more these number of words will be used in next 100 years.

Sanskrit has the power to say a sentence in a minimum number of words than any other language.

America has a University dedicated to Sanskrit and the NASA too has a department in it to research on Sanskrit manuscripts.

Sanskrit is the best computer friendly language. (Ref. Forbes Magazine July 87)

Sanskrit is a highly regularized language. In fact, NASA declared it to be the "only unambiguous spoken language on the planet"- and very suitable for computer comprehension.

Sanskrit is an official language of the Indian state of Uttarakhand.

There is a report by a NASA scientist that America is creating 6th and 7th generation super computers based on Sankrit language. Project deadline is 2025 for 6th generation and 2034 for 7th generation computer. After this there will be a revolution all over the world to learn Sanskrit.

The language is rich in most advanced science, contained in their books called Vedas, Upanishads, Shruti, Smriti,Puranas, Mahabharata, Ramayana etc. (Ref: Russian State University, NASA etc. NASA possesses 60,000 palm leaf manuscripts, which they are studying.)

Learning of Sanskrit improves brain functioning. Students start getting better marks in other subjects like Mathematics, Science etc., which some people find difficult. It enhances the memory power. James Junior School, London, has made Sanskrit compulsory. Students of this school are among the toppers year after year. This has been followed by some schools in Ireland also.

Research has shown that the phonetics of this language has roots in various energy points of the body and reading, speaking or reciting Sanskrit stimulates these points and raises the energy levels, whereby resistance against illnesses, relaxation to mind and reduction of stress are achieved.

Sanskrit is the only language which uses all the nerves of the tongue. By its pronunciation, energy points in the body are activated that causes the blood circulation to improve. This, coupled with the enhanced brain functioning and higher energy levels, ensures better health. Blood Pressure, diabetes, cholesterol etc. are controlled.

(Ref: American Hindu University after constant study)

There are reports that Russians, Germans and Americans are actively doing research on Hindu's sacred books and are producing them back to the world in their name. Seventeen countries around the world have a University or two to study Sanskrit to gain technological advantages.

Surprisingly, it is not just a language. Sanskrit is the primordial conduit between Human Thought and the Soul; Physics and Metaphysics; subtle and Gross; Culture and Art; Nature and its Author; Created and the Creator.

Sanskrit is the scholarly language of 3 major World religions–Hinduism, Buddhism (along with Pali) and Jainism (second to Prakrit).

Today, there are a handful of Indian villages (in Rajasthan, Madhya Pradesh, Orissa, Karnataka and Uttar Pradesh) where Sanskrit is still spoken as the main language. For example in the village of Mathur/Mattur is a village 10kms from Shimoga speaks Sanskrit on daily basis (day-to-day communication).

Even a Sanskrit daily newspaper exists! Sudharma, published out of Mysore, has been running since 1970 and is now available online as an e-paper (sudharma, epapertoday.com)

The best type of calendar being used in Hindu calendar (as the New Year starts with the geological change of the solar system) (Ref: German state university)

The UK is presently researching on a defence system based on Hindu's shri chakra.

Another interesting fact about Sanskrit language was that the process of introducing new words into the language continued for a long period until it was stopped by the great grammarian Panini who wrote an entire grammar for the language laying down rules for the derivation of each and every word in Sanskrit and disallowed the introducing of new words by giving a full list of Roots and Nouns. Even after Panini, some changes occured which were regularised by Vararuchi and finally by Patanjali. Any infringement fo the rules as laid down by Patanjali was regarded as a grammatical error and hence the Sanskrit. Language has remained the same without any change from the date of Patanjali (about 250 B.C.) up to this day.

Sanskrit is the only language in the world that exists since millions of years. Millions of languages that emerged from Sanskrit are dead and millions will come but Sanskrit will remain eternal. It is truly a language of Bhagwan. Wealth of information in Sanskrit language. Shows how India lags behind the Americans in this matter. We Indians are reading sacred texts, performing pujas for various religious festivals throughout the year. So we will not be lying if we say Sanskrit is also one of the languages in the next Census exercise without forgetting, thus help save our own language from disappearing & doing our bit for the language.

Brahmasha India Vedic Research Foundation acknowledges with thanks receipt of Rs. 500/- from Sh. Vijay Kumar Gulati, C2A/112, Janakpuri, New Delhi-58

Donations to the Foundation are eligible for Tax Exemption under section 80G of the Incom Tax Act 1960 vide No. DIT(E)1/3313/ DELBE 21670-2503210 dated 25.03.2010.

Date of Pubn. : 30.8.2017 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3Sep. 2017
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2017-2019

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद् भुवनानि धारयन्।।

।।यजु.17.20।।

ऋषिः-भुवनपुत्रो विश्वकर्मा, देवता-विश्वकर्मा, छन्द-त्रिष्टुम्

अर्थ-परमात्मा ने जब द्युलोक और पृथिवी लोक को गढ़ा, इसका निर्माण किया तो वह कौन-सा वन था और उस वन का वह कौन-सा वृक्ष था जिससे इन सबको बनाया? उसने अपनी अनन्त सामर्थ्य से द्युलोक यानी स्वर्ग (सुख-विशेष), पृथिवी (मानव के लिए) और नरक (दुःख-विशेष युक्त) लोकों को रचा। (मनीषिणः) विचारक विद्वज्जनो! जो सब लोकों को धारण करने वाला परमेश्वर सबके ऊपर विराजमान है उसके विषय में तुम जानो। मन में विचार करो कि उसने किस पर अधिष्ठित होकर इस सृष्टि की रचना की।

What is the True Knowledge in this universe? Where is the forest and what is tree from which the 'Almighty carpenter has made this multifarious universe-the heaven, the earth and other planets?

The Almighty God has made-the heaven, the highest sphere of existence super-abounding with happiness, the earth in which happiness and sorrow both fall to the lot of living beings in accordance with their previous actions (karmas) and the hell, the lowest sphere of existence abounding in unalloyed misery and also other planets from the primordial atomic matter which indeed is the forest as well as the tree - the material cause from which the universe is created. Oh learned men, you should with a sincere mind indeed, enquire and try to know about that supreme being who has created all the planets, supervises and sustains them all and thus reigns supreme in this universe. Only by knowing and realising Him, human beings can attain felicity and not otherwise. The realisation of this fact in reality is the true knowledge in this universe.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58